

तत्वों की उत्पत्ति

श्रीनिवासन कृष्णन

यह लेख तारों के भीतर घटित होने वाली प्रक्रिया के रूप में रासायनिक तत्वों की उत्पत्ति की तथा लोगों के लिए इनके क्या मायने हैं, इस बात की, खोजबीन करता है।

यह एक ज़ाहिर तथ्य है, कि जिस दुनिया को हम जानते हैं वह विभिन्न पदार्थों से मिलकर बनी है। इस दुनिया को हम अपनी इन्द्रियों के माध्यम से देखते हैं तथा नए पदार्थों की खोज करने में, और ज्ञात पदार्थों को निरन्तर नए उपयुक्त तरीक़ों से वर्गीकृत करने के लिए निगमन (डिडक्शन) और अनुमान लगाने (जो मुख्यतः वर्तमान प्रौद्योगिकी तथा बौद्धिक संरचनाओं की मज़बूती पर निर्भर करते हैं) की अपनी क्षमताओं का प्रयोग करते हैं। मनुष्य इंजीनियरिंग की अपनी मज़बूत क्षमताओं का जिस तरह प्रदर्शन करते हैं, उसे देखते हुए और प्राचीन काल से भी यह स्पष्ट हो चुका है कि हम वर्तमान पदार्थों के उपयुक्त मिश्रण और आसवन द्वारा नए प्रकार के पदार्थ भी बना सकते हैं। इसके उदाहरण हैं, कोई व्यंजन बनाना, दवाइयों और पेय पदार्थों के मिश्रण बनाना, इमारतों और उपकरणों का निर्माण इत्यादि। निरन्तर, वांछित गुणों वाले जटिल पदार्थ और तंत्र बनाते जाने की अपनी क्षमता पर निश्चित ही यह सवाल युगों से पूछा जाता रहा होगा, "वे बुनियादी पदार्थ कौन-से हैं जिनसे बाक़ी सारे पदार्थ बन जाते हैं?"

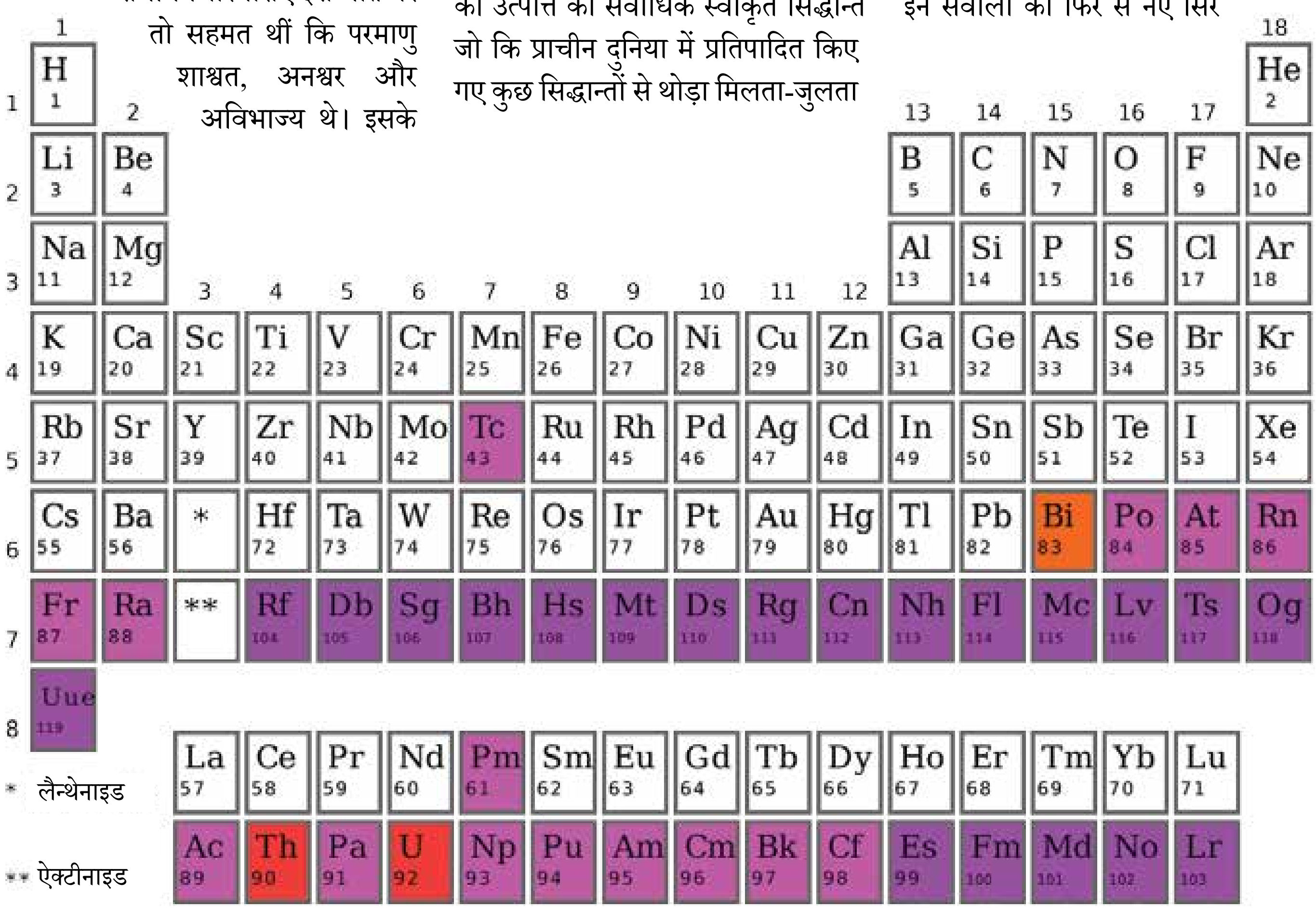
विभिन्न सभ्यताओं ने इस सवाल का जवाब देने की कोशिश की है, और यह लगता है कि उन सभी ने 'तत्वों' के अस्तित्व को स्वीकार किया था। तत्वों के बारे में यह माना गया कि जब ब्रह्माण्ड की रचना हुई, तभी तत्वों की भी रचना हुई। तत्वों को ऐसे अनोखे और बुनियादी भवन खण्ड माना जाता रहा है जिनसे बाक़ी सारे ढाँचे बनते हैं। भारतीय और यूनानी लोग यह मानते थे कि संसार पाँच तत्वों से मिलकर बना है आकाश, वायु, जल, अग्नि और पृथ्वी। चीनी लोग मानते थे कि लकड़ी, धातु, पृथ्वी, जल और अग्नि मिलकर दुनिया के सारे पदार्थों को बनाते हैं आदि-आदि।

दूसरी तरफ़, परमाणुओं को तत्वों का अविभाज्य कण माना जाता था। उदाहरण के लिए, छठी सदी ईसा पूर्व में वैशेषिक

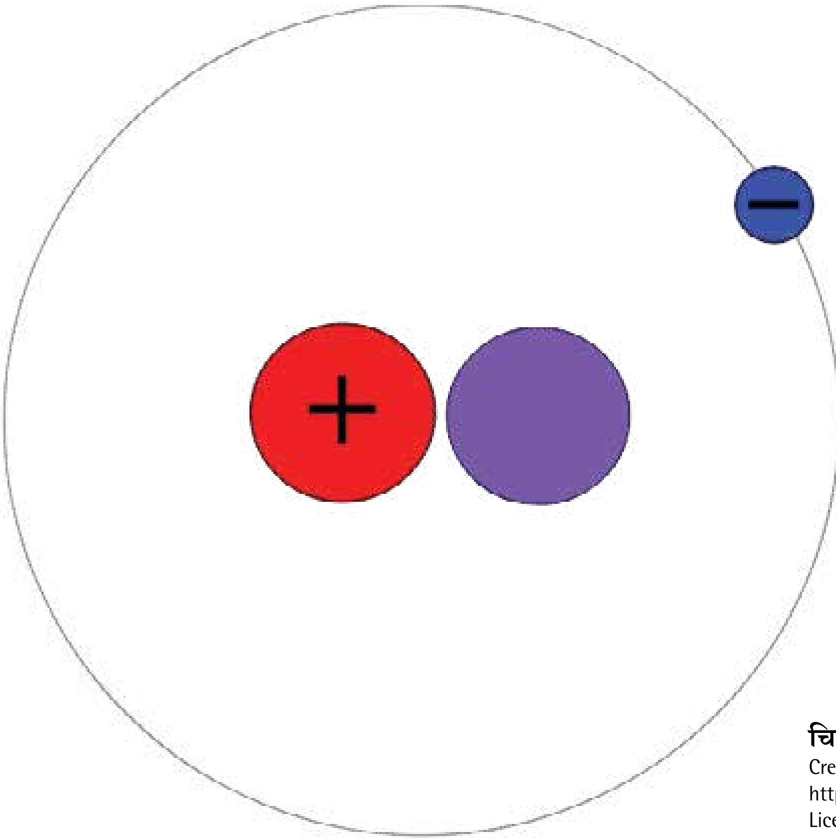
दर्शन के प्रवर्तक, कणाद ने माना कि संसार परमाणुओं से बना है, और इनके चार बुनियादी प्रकार थे जो चार तत्वों - पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु - के सदृश थे। इन विभिन्न प्रकार के परमाणुओं में से प्रत्येक के अन्य गुण भी निर्धारित किए गए थे, और इस बात के बड़े जटिल नियम थे कि पृथ्वी पर दिखने वाले तमाम पदार्थों को बनाने के लिए इन परमाणुओं को किस तरह आपस में मिलाया जाए। इसी प्रकार, बौद्ध, जैन, इस्लामिक और यूनानी विचारधाराओं में भी परमाणुओं की अवधारणा तत्वों के प्रतिनिधि, और समस्त पदार्थ के मूल के रूप में बनाई गई, लेकिन उनके वर्णनों और बताए गए गुणों में फ़र्क़ था (समग्र व्याख्या के लिए बर्नार्ड पुलमैन[3] की 'द ऐटम इन द हिस्ट्री ऑफ ह्यूमन थॉट' देखें)। लेकिन सभी विचारधाराएँ इस बात पर तो सहमत थीं कि परमाणु शाश्वत, अनश्वर और अविभाज्य थे। इसके अलावा एक और महत्त्वपूर्ण बात उनकी समझ में आई थी कि किसी भी एक प्रकार के सभी परमाणु एक जैसे होते थे।

इससे यह बात सिद्ध हो जाती है कि तत्व और परमाणु प्राचीन दुनिया में एक-दूसरे से बहुत जटिल ढंग से जुड़े हुए थे - और आधुनिक संसार में भी ऐसा ही है। आज, हम स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले 92 तत्वों के बारे में तो जानते ही हैं, इसके अलावा कृत्रिम रूप से कई और तत्व बना सकते हैं जिनके परमाणु क्रमांक 92 से अधिक होंगे। ऐसा इसीलिए सम्भव है क्योंकि परमाणुओं और तत्वों के बीच का सम्बन्ध इतना मज़बूत है कि ऐसी रचना करने का मौक़ा मिलता है। तो, आधुनिक वैज्ञानिक बुद्धिमत्ता के अनुसार स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले इन तत्वों का निर्माण कैसे हुआ? ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति का सर्वाधिक स्वीकृत सिद्धान्त जो कि प्राचीन दुनिया में प्रतिपादित किए गए कुछ सिद्धान्तों से थोड़ा मिलता-जुलता है, उसे बिग बैंग (महा विस्फोट) सिद्धान्त कहा जाता है। ऐसा माना जाता है कि, इस घटना ने, जो कि लगभग 1400 करोड़ साल पहले घटित हुई थी, आदि तत्व हाइड्रोजन (जो एक प्रोटॉन और उसके संगत इलेक्ट्रॉन द्वारा बनता है) की विशाल मात्रा का, और हीलियम की बहुत थोड़ी मात्राओं का, तथा अन्य तत्वों व समस्थानिकों (आइसोटोप) की सांकेतिक मात्रा का सृजन किया था। यह काफ़ी रोचक बात है, इस बात को ध्यान में रखते हुए कि बिग बैंग सिद्धान्त लगभग पूरी तरह से ब्रह्माण्ड के प्रेक्षणों और प्रयोगशाला में किए गए प्रयोगों से निकला था।

चूँकि तत्वों और परमाणुओं के बीच के सम्बन्धों के बारे में बने पुराने सिद्धान्त आधुनिक विज्ञान की कठोरता की छानबीन को झेलने में असमर्थ रहे हैं, इसलिए हम इन सवालों को फिर से नए सिरे



चित्र-1 : सभी ज्ञात तत्वों की आवर्त सारणी।



चित्र-2 : ड्यूटेरियम (भारी हाइड्रोजन) परमाणु
Credits: ZYjacklin, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:H-2_atom.png. License: Public Domain.

से देखेंगे, 'किसी तत्व को किस तरह परिभाषित किया जाता है?' और, 'परमाणु क्या होते हैं और तत्वों के साथ इनका क्या सम्बन्ध है?' हम तत्वों की उत्पत्ति के बारे में अपनी यात्रा की शुरुआत इनमें से पहले सवाल के साथ करेंगे।

तत्व को परिभाषित करना

ऐतिहासिक रूप से, तत्वों को विभिन्न तरीक़ों से परिभाषित किया जाता रहा है। उदाहरण के लिए, अब 'अप्रचलित' एक परिभाषा कहती है कि, *"तत्व ऐसा पदार्थ होता है जिसे और सरल पदार्थों में अपघटित नहीं किया जा सकता।"* यह सम्भवतया तत्व की पहली उपयोगी परिभाषा थी, क्योंकि इसने प्रायोगिक रूप से एक तत्व और दूसरे तत्व के बीच भेद करने का मौक़ा दिया। यदि किसी पदार्थ को दो-या-दो से अधिक नए तत्वों में विभाजित किया जा सकता, और फिर वे तत्व वापस जुड़कर मूल पदार्थ बना

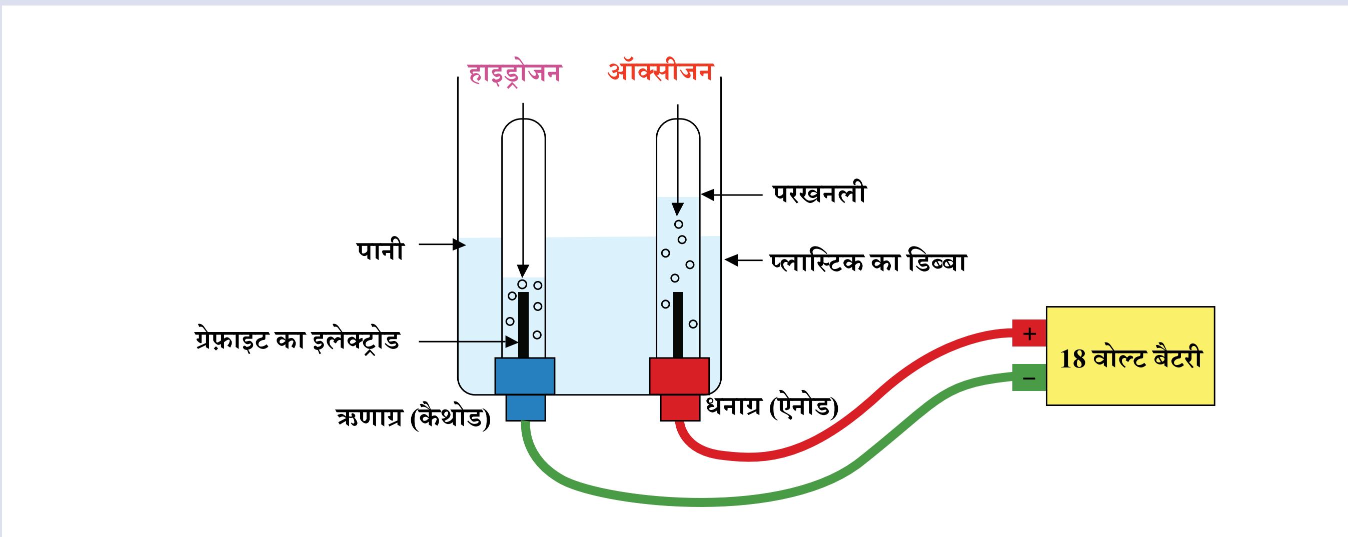
बॉक्स-1 : प्रायोगिक निगमन: किसी तत्व को तत्व के रूप में जानना। वह कोई यौगिक या मिश्रण क्यों नहीं हो सकता?

अगर आप ग्रेफ़ाइट की दो छड़ों (आप पेंसिल की मोटी छड़ों का भी प्रयोग कर सकते हैं) को एक गिलास नल के पानी में रख दें और फिर इन छड़ों को एक 18 वोल्ट की बैटरी से जोड़ दें, तो आपको दोनों इलेक्ट्रोडों पर बुलबुले निकलते हुए दिखाई देंगे। इन दो इलेक्ट्रोडों पर निकली गैसों को आसानी से परखनलियों में इकट्ठा किया जा सकता है। पाठ्यपुस्तकों और अन्य स्रोतों से अब हम यह जानते हैं कि ये दोनों गैसें तत्व, यानी, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन हैं - लेकिन इस बात को हम प्रायोगिक रूप से कैसे सिद्ध करें?

उदाहरण के लिए ऑक्सीजन को लें। चलिए पहले हम यह कल्पना करें कि यह दो-या-दो से अधिक गैसों के मिश्रण से बनी है। यह मानते हुए कि हम गैसों को अलग करने की सभी ज्ञात तकनीकों का प्रयोग कर सकते हैं, हमें इनमें से **कम-से-कम एक** पद्धति द्वारा तो इन गैसों को अलग-अलग प्राप्त करना ही चाहिए। इससे यह प्रमाणित हो जाएगा कि ऑक्सीजन दरअसल गैसों का मिश्रण होती है। लेकिन, वास्तविक दुनिया में, हम सिर्फ़ ऑक्सीजन के विभिन्न समस्थानिकों को ही अलग कर पाए हैं, और वे सभी अपने भौतिक और रासायनिक गुणों में एक-दूसरे से बहुत मिलते-जुलते हैं।

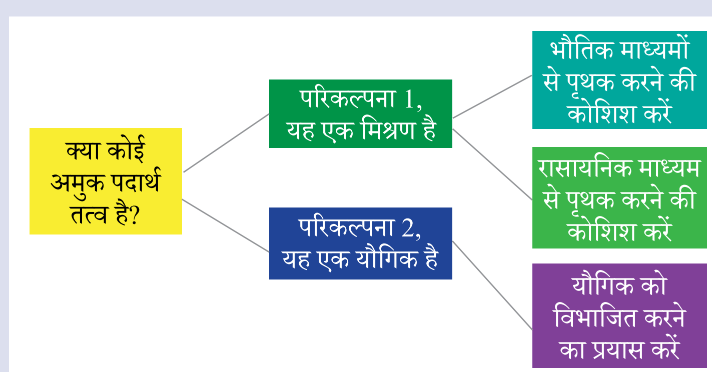
लेकिन, हम यह दलील दे सकते हैं कि ऑक्सीजन को एक-दूसरे से काफ़ी अलग, दो गैसों में पृथक करने में हमारी असमर्थता इसलिए है क्योंकि अभी हमारे पास ऐसा करने की प्रौद्योगिकी उपलब्ध नहीं है। इसलिए हम इस बात की परिकल्पना कर सकते हैं कि ऑक्सीजन के **रासायनिक गुण** ऐसे कई भिन्न-भिन्न गैसीय अवयवों की उपस्थिति को प्रगट कर पाएँगे, जो सभी सम्भवतया भार में एक-दूसरे के बराबर होंगे, और इसी कारण, पृथक करने की हमारी तकनीकों द्वारा उन्हें पहले

अलग नहीं किया जा सका था। इस परिकल्पना को जाँचने के एक तरीक़े में ऑक्सीजन और शुद्ध क्षारीय धातुओं (जैसे सोडियम और पोटेशियम) की ख़ास मात्राओं के बीच रासायनिक अभिक्रियाएँ कराना होगा। हम संक्रमण तत्वों के उपयोग से बचते हैं क्योंकि उनकी ऑक्सीकरण संख्याएँ अलग-अलग हो सकती हैं, और इस वज़ह से एक ही पदार्थ के साथ अभिक्रिया करने पर भी वे भिन्न-भिन्न प्रकार के यौगिक बना देते हैं। अगर हमें **किसी एक** अभिक्रिया में दो या उससे अधिक ऐसे यौगिक मिलते हैं जिनके बीच हम देखकर, सूँघकर, छूकर या फिर अन्य रासायनिक गुणों के द्वारा स्पष्ट रूप से भेद कर सकते हैं, तो इससे हमारी परिकल्पना सही सिद्ध हो जाएगी। एक और तरीक़ा जिसके द्वारा हम अपनी परिकल्पना की जाँच कर सकते हैं, वह है ऑक्सीजन को अन्य स्रोतों से प्राप्त करना, जैसे मर्करी (पारा) ऑक्साइड या कुछ नाइट्रेटों को गर्म करके। अगर यह ऑक्सीजन, पानी को विभाजित करने के दौरान उत्पन्न हुई ऑक्सीजन को अलग करने के बाद प्राप्त हाइड्रोजन से अभिक्रिया करती है, तो परिणामस्वरूप हमें पानी मिलना चाहिए। और यदि हमें पानी मिलता है, (**और वाकई में हमें पानी मिलता है**), तो यह दिखाता है कि सबसे सरल स्पष्टीकरण यही है कि ऑक्सीजन **गैसों का मिश्रण नहीं होती**। आह! यह तो वाकई में बहुत मेहनत है सिर्फ़ यह दिखाने के लिए कि, कोई अमुक पदार्थ मिश्रण नहीं है!



चित्र-3 : पानी का विद्युत अपघटन : ऑक्सीजन और हाइड्रोजन गैसें परखनलियों में एकत्रित होती हैं।

लेकिन, ऑक्सीजन की तात्विक प्रकृति के बारे में हमारा प्रमाण अभी भी निर्णायक नहीं है। तब क्या, अगर हम इस सम्भावना पर विचार करें कि ऑक्सीजन मिश्रण की बजाय दरअसल एक यौगिक है? तब स्थिति कहीं ज़्यादा पेचीदा हो जाती है। सबसे पहले तो, चूँकि यह सम्भव है कि अभी तक हमने इस यौगिक को रासायनिक रूप से विभाजित करने वाले उपकरणों की खोज न की हो, और तब तक, जब तक कोई ऐसी खोज कर ले, ऑक्सीजन को एक तत्व ही माना जाता रहेगा। जब हम ऐसी खोज कर लें, और ऑक्सीजन को उसके अवयवों में विभाजित करने के लिए इन उपकरणों का प्रयोग करने लगें, तो इन अवयवों को तत्व माना जाने लगेगा जब तक कि उन्हें किसी भी ज्ञात रासायनिक माध्यम द्वारा और विभाजित न किया जा सके। अभी तक तो ऐसा कभी नहीं हुआ है, और इसलिए हम यह "जानते हैं" कि ऑक्सीजन एक तत्व है, न कि यौगिक। नीचे दिए गए फ्लो चार्ट को देखें जिसमें किसी नए पता चले पदार्थ की पड़ताल करने की सम्भावित योजना को दर्शाया गया है।

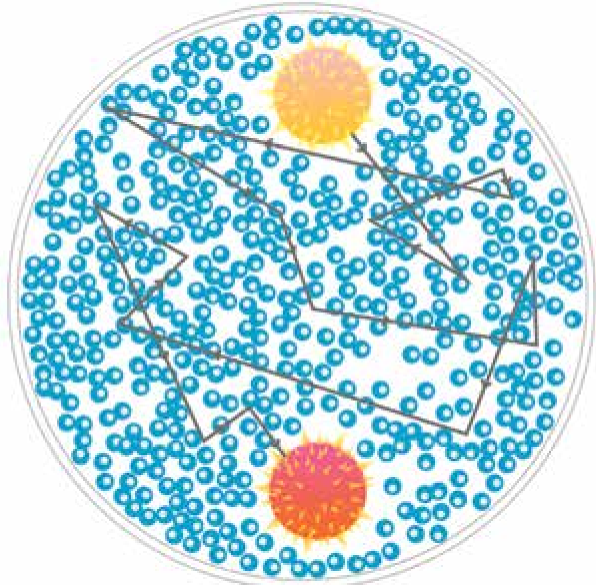


चित्र-4 : फ्लो चार्ट जो यह दिखा रहा है कि कोई पदार्थ, तत्व है या नहीं, इसकी पड़ताल करने की योजना कैसी होगी।

इस बात पर ध्यान देना दिलचस्प (और मनोरंजक) है कि लैवोज़ियर ने तत्वों की अपनी सूची में उन **सारे पदार्थों** को शामिल किया जिन्हें वे रासायनिक माध्यमों से विभाजित नहीं कर पाए थे। इसमें **प्रकाश, ऊष्मा** और धात्विक ऑक्साइड शामिल थे। उन्नीसवीं सदी में जब विद्युत धारा (इलेक्ट्रिक करंट) का व्यापक उपयोग किया जाने लगा तब जाकर धात्विक ऑक्साइडों को विभाजित किया जा सका। प्रकाश और ऊष्मा तो ज़ाहिर है, पदार्थ नहीं हैं, और इसलिए अब इन्हें तत्वों के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जाता।

बॉक्स-2 : क्या परमाणु वास्तव में होते हैं?

हमने देखा है कि तत्वों की उत्पत्ति पर होने वाली कोई भी चर्चा परमाणुओं की धारणा से ही शुरू होनी चाहिए - चूँकि तत्व परमाणुओं से मिलकर ही बनते हैं। पर क्या परमाणु वास्तव में होते हैं? यह एक बड़ी पहेली थी, कि उनकी संकल्पना के बहुत बाद (और आधुनिक रसायनविज्ञान के जन्म के बाद) भी, कोई भी वास्तव में परमाणुओं को किसी भी प्रकार से देख नहीं पाया था। दरअसल, पिछली सदी के अन्त में जाकर हम ऐसी स्थिति में पहुँचे हैं कि हम वास्तव में परमाणुओं को देखने के काफ़ी क़रीब आ चुके हैं (परमाणुओं के इतिहास के बारे में ज्ञानवर्धक जानकारी के लिए, और उन्हें किस प्रकार देखा जा सकता है या उनमें हेरफेर किया जा सकता है, इसके लिए यह वीडियो देखें (https://www.youtube.com/watch?v=ipzFnGRfsfE)।



चित्र-5 : पराग की टेढ़ी-मेढ़ी गति पानी में परमाणुओं की ब्राउनी गति का परिणाम होती है।

इसके बावजूद, परमाणुओं की कल्पना अत्यधिक महत्त्व की रही है। जैसा कि प्रसिद्ध भौतिकविज्ञानी प्रोफ़ेसर फ़ाइनमैन ने लिखा था, *"अगर प्रलय जैसी किसी स्थिति में हमारा सारा वैज्ञानिक ज्ञान नष्ट हो जाए, और प्राणियों की अगली पीढ़ी को हमारा सिर्फ़ एक वाक्य विरासत में मिलना हो, तो वह कौन-सा वाक्य होगा जिसमें सबसे कम शब्दों में सर्वाधिक जानकारी निहित होगी? मुझे लगता है कि वह* ***परमाणु परिकल्पना*** *(या परमाणविक* ***तथ्य****, या जो भी आप इसे कहना चाहें) होगी, कि* ***सभी वस्तुएँ परमाणुओं से बनती हैं जो ऐसे छोटे-से कण हैं, जो सतत रूप से गतिमान रहते हैं, और थोड़ी-सी दूरी होने पर एक-दूसरे को आकर्षित करते हैं, लेकिन एक-दूसरे में ठूँसे जाने पर दूर हटते हैं।*** *आप देखेंगे इस एक वाक्य में, दुनिया के बारे में* ***प्रचुर*** *जानकारी निहित है, अगर थोड़ी-सी कल्पनाशक्ति और समझ का इस्तेमाल किया जाए।"*

प्रयोग : ब्राउनी गति के माध्यम से परमाणुओं को अप्रत्यक्ष रूप से 'देखना'।

किसी घास के फूल से थोड़ा-सा पराग लेकर उसे पानी की एक बूँद में डालें और सूक्ष्मदर्शी से इसका प्रेक्षण करें। अगर पराग का आकार एकदम सही हो (न ज़्यादा भारी, और न ज़्यादा हल्का), तो आप उसे सीधी-सहज अनवरत गति करने की बजाय कुछ **अनियमित ढंग** से गति करते या हिचकोले खाते हुए देखेंगे। इसी टेढ़ी-मेढ़ी गति को 'ब्राउनी गति' कहा जाता है, और इसका यह नाम रॉबर्ट ब्राउन के नाम पर पड़ा जिन्होंने 1827 में इसकी खोज की थी (हालाँकि इसे समझा नहीं पाए थे)।

1905 में प्रकाशित हुए, एक पथ-प्रदर्शक पत्र में, आइंस्टीन ने दिखाया कि इस टेढ़ी-मेढ़ी गति ने निर्विवाद रूप से परमाणुओं के अस्तित्व को साबित कर दिया था। आइंस्टीन को इसी खोज के लिए 1921 में भौतिकी का नोबेल पुरस्कार मिलना यह दिखाता है कि इस खोज को कितना महत्त्वपूर्ण माना गया था।

इस प्रयोग में, पराग की टेढ़ी-मेढ़ी गति दरअसल यह **साबित** करती है कि पानी की बूँद परमाणुओं से मिलकर बनती है। यह कैसे साबित होता है? अगर पानी की बूँद में निरन्तरता होती तो जैसे-जैसे पानी हिचकोले खाते हुए आगे बढ़ता, उसमें निलम्बित पराग के कण सिर्फ़ डूबते-उतरते रहते और विभिन्न दिशाओं में सीधी-सरल गति करते रहते। लेकिन उनकी यह टेढ़ी-मेढ़ी गति बताती है कि असल में हर परागकण पर भी अनियमित और आकस्मिक ढंग से प्रहार हो रहे हैं। ये आकस्मिक प्रहार तभी सम्भव हैं जब पानी परमाणुओं से मिलकर बना हो और वे ही इधर-उधर घूमते हुए ये प्रहार कर रहे हों।

एक, थोड़ा मुश्किल प्रयोग है, काँच के डिब्बे में डाले गए धुएँ के कुछ कणों से चमकदार रोशनी गुज़ारें, और अब सूक्ष्मदर्शी से इसका प्रेक्षण करें। धुएँ के चक्कर लगाते ढेर के बीच, कभी-कभी हमें धुएँ के कण भी नज़र आ सकते हैं, जो प्रकाश के चमकदार बिन्दुओं जैसे दिखाई देते हैं और हमें ब्राउनी गति दिखाते हैं।

ब्राउनी गति के एकदम सटीक चलचित्र के लिए यह देखें, https://en.wikipedia.org/wiki/Brownian_motion.

देते तो, वह मूल पदार्थ निश्चित रूप से तत्व नहीं था। ज़ाहिर है, कि कोई पदार्थ दरअसल एक तत्व है, इसे निर्णायक रूप से प्रमाणित करने के लिए इस परिभाषा का उपयोग करना असम्भव है क्योंकि कोई पदार्थ जिसे एक सदी में प्रचलित प्रौद्योगिकी का प्रयोग करके अपघटित नहीं किया जा सका हो, अगली सदी में ज़्यादा उन्नत प्रौद्योगिकियों के उपलब्ध होने पर हो सकता है कि उसी

पदार्थ को अपघटित किया जा सके।

एक और परिभाषा देखें, और यह भी अब प्रचलित नहीं है, लेकिन ज़्यादा उपयोगी है : *"तत्व एक जैसे परमाणुओं से बना पदार्थ होता है।"* यह परिभाषा (जॉन डाल्टन के) परमाणु सिद्धान्त की आधारशिलाओं में से एक थी, लेकिन **समस्थानिकों** की खोज ने इस परिभाषा को प्रचलन से बाहर कर दिया। इस खोज ने

बॉक्स-3 : प्रयोग : किसी गैस को दबाना

इस प्रयोग के लिए आपको 20 मिलीलीटर की एक सिरिंज की ज़रूरत होगी। जहाँ सुई बैठती है, उस मुँह को बन्द करने के लिए थोड़ा-सा ऐरलडाइट लगा दें। इस मुँह को बन्द करने से पहले पिस्टन को पूरा पीछे खींच लें और इस तरह सुनिश्चित कर लें कि सिरिंज के भीतर पर्याप्त मात्रा में हवा है। ऐरलडाइट के सूखने के बाद, सिरिंज के पिस्टन को अधिकतम सीमा तक दबाने की कोशिश करें, और अपने प्रेक्षणों को दर्ज कर लें। स्पष्ट है, कि पिस्टन को दबाते समय हवा आपको पीछे धकेलती महसूस होती है। वह ऐसा कैसे कर पाती है?

यहाँ यह हो रहा है कि हवा के अणु सिरिंज के कंटेनर की दीवारों से जाकर टकराते हैं, और सिरिंज का आयतन घटते जाने के साथ उनके टकराने की आवृत्ति बढ़ जाती है। पिस्टन के भीतर, हर स्थिति में हवा द्वारा लगाया जाने वाला दबाव आपके द्वारा पिस्टन पर लगाए जा रहे दबाव के बराबर रहता है, और यदि आप अपने दबाव में थोड़ी-सी भी कमी लाते हैं, तो पिस्टन वापस अपनी मूल स्थिति में आ जाता है।

जब इस प्रयोग को एक बड़े पिस्टन-सिलिण्डर तंत्र, जैसे कि साइकिल का पम्प, का इस्तेमाल करके किया जाता है तो पम्प के भीतर की हवा निश्चित रूप से ज़्यादा गर्म हो जाती है, यानी उसका तापमान बढ़ जाता है।

बॉक्स-4 : तर्क का विस्तार : एक बादल के भीतर का गतिविज्ञान

गैस के संघनित होते बादल के भीतर क्या-क्या चीज़ें हो सकती हैं? मैंने अपने कुछ सवालों की सूची नीचे बनाई है। आप भी अपने सवाल इस सूची में जोड़ सकते हैं।

- जब गैस का कोई बादल संघनित होता है, तो फिर वह गर्म क्यों हो जाता है? हमें ध्यान में रखना चाहिए कि मानक गैस समीकरण (PV = nRT इत्यादि) जो आदर्श गैसों पर लागू होते हैं, इस संकुचन पर भी अधिकांश रूप से लागू होंगे।
- गर्म होने पर संकुचन का क्या होता है?
- आन्तरिक गुरुत्वाकर्षण के कारण संघनन के लिए गैस की कितनी मात्रा की ज़रूरत होती है?
- क्या गैस के संघनित होने के साथ उसके केन्द्र के भीतर का तापमान बढ़ता है?

जहाँ तक पहले और दूसरे सवाल की बात है, तो गैस गर्म होती जाती है, जिसका सीधा-सा कारण है कि उसके अणु एक छोटी जगह में सीमित हो जाते हैं, जो काफ़ी कुछ साइकिल पम्प के भीतर की गैस जैसी स्थिति होती है जो संपीड़ित होती है और उसके बाहर निकलने की कोई जगह नहीं होती। पृथ्वी पर, जब किसी गैस का तापमान एक निश्चित स्तर तक पहुँच जाता है, तो उसका संकुचन बन्द हो जाता है, जिसका कारण आमतौर पर उसे चारों ओर से घेरी हुई दीवारें होती हैं। इसके विपरीत, किसी गैस के किसी विशाल बादल में संकुचन से गरमाहट पैदा होती है, जो उसका आगे और संकुचन रोक देती है। लेकिन, यह गरमाहट सुनिश्चित करती है कि गैस के बादल की ऊष्मा का उसकी सतह से विकिरण हो जाए। इससे गैस ठण्डी हो जाती है, और जब वह पर्याप्त रूप से ठण्डी हो जाती है, तो संकुचन और पिण्ड बनना नए जोश से शुरू हो जाता है, और बादल छोटा हो जाता है। **यह निश्चित ही एक तेज़ी-से घटने वाला प्रभाव है - यह घटनाक्रम निरन्तर चलता रहता है, और यह तभी रुकता है जब बादल में पदार्थ की मात्रा कम रह जाती है।**

तीसरे सवाल के कई जवाब हो सकते हैं। इनमें से एक से हमें यह समझ मिलती है कि तारे कैसे बनते हैं। आमतौर पर परमाणु एक-दूसरे के इतने क़रीब नहीं जा सकते। इसलिए, किसी ठोस, द्रव या गैस को एक निश्चित स्थिति के बाद दबाना उत्तरोत्तर मुश्किल होता जाता है। किसी गैस को **अपने ही गुरुत्वाकर्षण** के कारण संकुचित होने के लिए, उसका गुरुत्वाकर्षण बहुत अधिक होने की ज़रूरत है, क्योंकि हम यह जानते हैं कि गुरुत्वाकर्षण ब्रह्माण्ड का सबसे कमज़ोर बल है। इसके अलावा, **पाउली के अपवर्जन नियम** के अनुसार, जो यह कहता है कि दो इलेक्ट्रॉनों या प्रोटॉनों या न्यूट्रॉनों को एक-दूसरे के ऊपर नहीं रख सकते, कोई बादल गुरुत्वाकर्षी रूप से तभी संपीड़ित होगा जब उसका द्रव्यमान लगभग 4×10^{32} ग्राम की सीमा से अधिक हो। इसलिए किसी गैस के बादल का द्रव्यमान जितना अधिक होगा, उससे बनने वाले तारे भी उतने ही गर्म होंगे। यहाँ हम यह बता दें कि हमारे सूर्य का द्रव्यमान लगभग 2×10^{33} ग्राम है, जो, ज़ाहिर है कि, संघनन के लिए ज़रूरी न्यूनतम द्रव्यमान से अधिक है।

अन्तिम सवाल के लिए, यह पता चलता है कि गैस के बादल के केन्द्र का ताप निश्चित बढ़ता है, और उसका मान बादल के द्रव्यमान पर निर्भर करता है। यह बात तार्किक है क्योंकि ज़्यादा द्रव्यमान वाले किसी गैस के बादल के लिए संकुचन ज़्यादा तेज़ी-से होगा, इसलिए गैस का और गर्म होना लाज़िमी है। इस स्पष्टीकरण को पहले और दूसरे सवालों के जवाबों से जोड़कर, हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि गैस के बादल के केन्द्र को उत्तरोत्तर गर्म होते जाना चाहिए। यह कितना गर्म हो सकता है? दरअसल, जब वह कुछ करोड़ डिग्री सेंटीग्रेड पर पहुँचता है, तो **नाभिकीय अभिक्रियाएँ शुरू हो जाती हैं**, यानी प्रोटॉनों की ऊर्जा धीरे-धीरे, धनात्मक रूप से आवेशित प्रोटॉनों के बीच लगने वाले विद्युत चुम्बकीय प्रतिकर्षण बल से निजात पाने लगती है। जैसा कि हम बाद में देखेंगे, इसका अर्थ यह होता है कि किसी गैस के बादल का आन्तरिक तापमान और अधिक बढ़ सकता है।

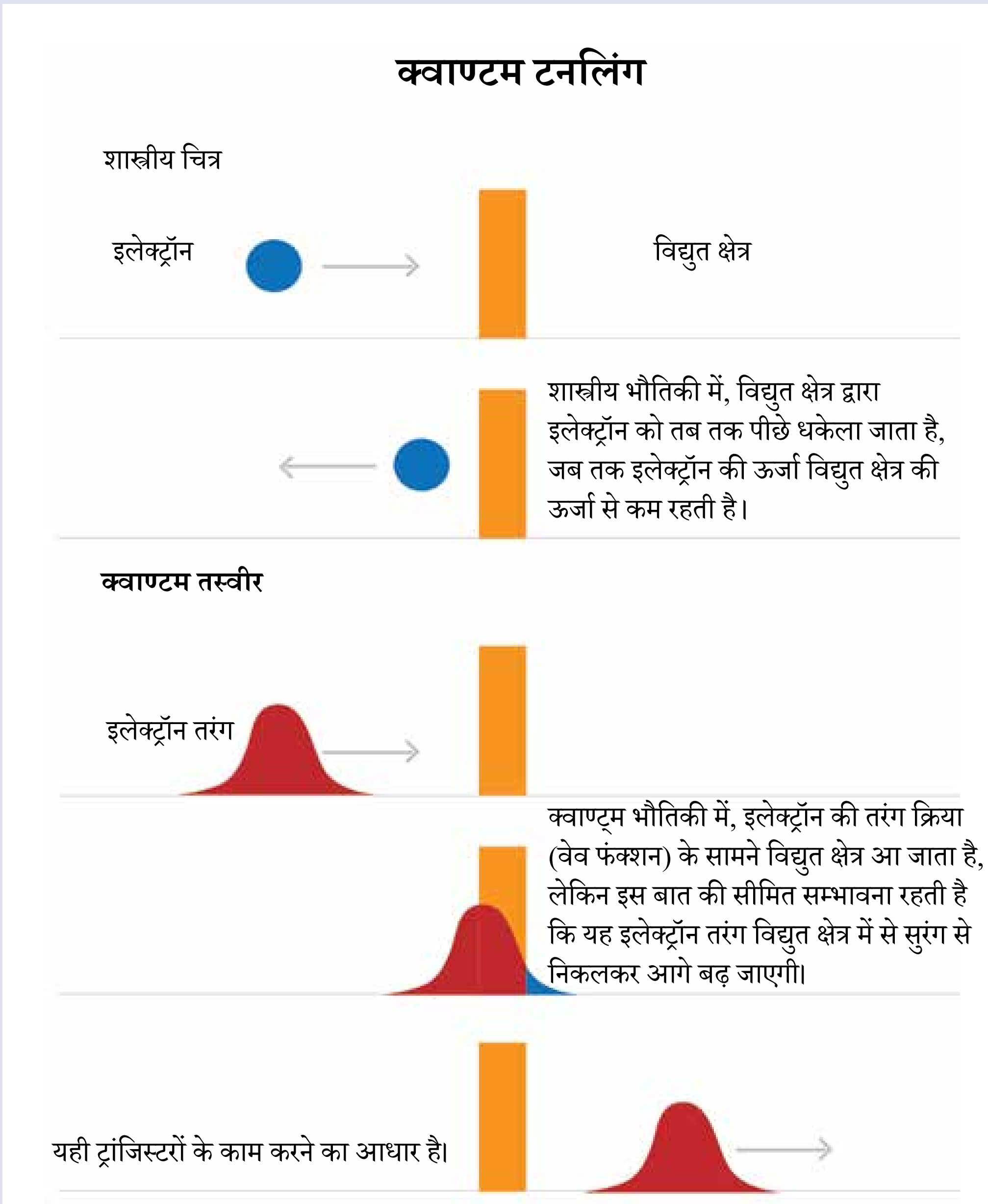
बॉक्स-5 : रहस्यमयी क्वाण्टम यांत्रिकी और क्वाण्टम टनलिंग

क्वाण्टम यांत्रिकी क्या है? अगर सरल ढंग से समझाएँ तो, आपको एक ऐसे तंत्र की कल्पना करना है जिसके अस्तित्व की कुछ सीमित अवस्थाएँ हों। इसे समझने के लिए, कल्पना करें कि एक ऐसे "बॉक्स" के भीतर एक कण को रखा जाता है जो किंचित भेद्य हो (अगर इस कण में पर्याप्त गतिज ऊर्जा हो)। यह स्पष्ट है कि, इस कण की 'अवस्थाएँ' बॉक्स के भीतर कहीं पर भी होने की, और उसके बाहर कहीं पर होने की हैं। किसी अवस्था का एक उदाहरण हो सकता है - थोड़ी तेज़ चाल के साथ एक निश्चित दिशा में किसी निश्चित समय पर बॉक्स के मध्य में किसी बिन्दु पर कण की स्थिति। यह अवस्था उस अवस्था से भिन्न है जब यह कण उसी चाल से किसी दूसरी दिशा में किसी निश्चित समय पर बॉक्स के 10 सेंटीमीटर बाहर हो। स्पष्ट है, कि कण अपनी स्थिति और वेग के बदलते रहने के साथ अपनी अवस्थाएँ भी बदलता रहता है।

अब कल्पना करें, कि इनमें से हर एक अवस्था कुछ **सम्भावना** के साथ घटित हो सकती है। अगर हम किसी तरह **अवस्थाओं के अध्यारोपण** की कल्पना कर सकें, जिसमें इलेक्ट्रॉन या कण किसी एक अवस्था में होने की बजाय, सम्भवतया **अपनी सभी सम्भव अवस्थाओं का मिश्रण** हो (इसका मिश्रण कैसे होगा यह गणितीय नियमों के आधार पर तय होता है और इसे साधारण भाषा में आसानी से नहीं बताया जा सकता), तो आपके पास क्वाण्टम यांत्रिकी सिद्धान्त का एक नमूना मौजूद होगा। हमें इसमें यह अन्तिम स्थिति जोड़नी पड़ेगी, कि **जब हम कोई मापन करते हैं**, तब इस कण या इलेक्ट्रॉन को किसी निश्चित अवस्था में ही **होना** होगा। बॉक्स के भीतर रखा कण दो ही अवस्थाओं में हो सकता है, या तो बॉक्स के भीतर किसी जगह या फिर बॉक्स के बाहर किसी जगह।

अब आता है सबसे अद्भुत भाग। अगर शुरुआत में, कण की ऊर्जा बॉक्स को भेदने के लिए ज़रूरी ऊर्जा से कम रही हो, तो भी इस बात की थोड़ी सम्भावना है कि वह कूदकर, या दूसरे शब्दों में कहें, तो **सुरंग द्वारा बाहर निकल** सकता है। अवस्थाओं के अध्यारोपण पर लागू होने वाले नियम किसी ढंग से इस स्थिति को सम्भव बनाते हैं, और कभी-कभी कण ऐसा कर भी देता है। इसे विभिन्न परिस्थितियों में प्रायोगिक रूप से देखा गया है, और यह एक अनोखी क्वाण्टम घटना है। इस प्रभाव के सदृश कोई शास्त्रीय उदाहरण मौजूद नहीं है।

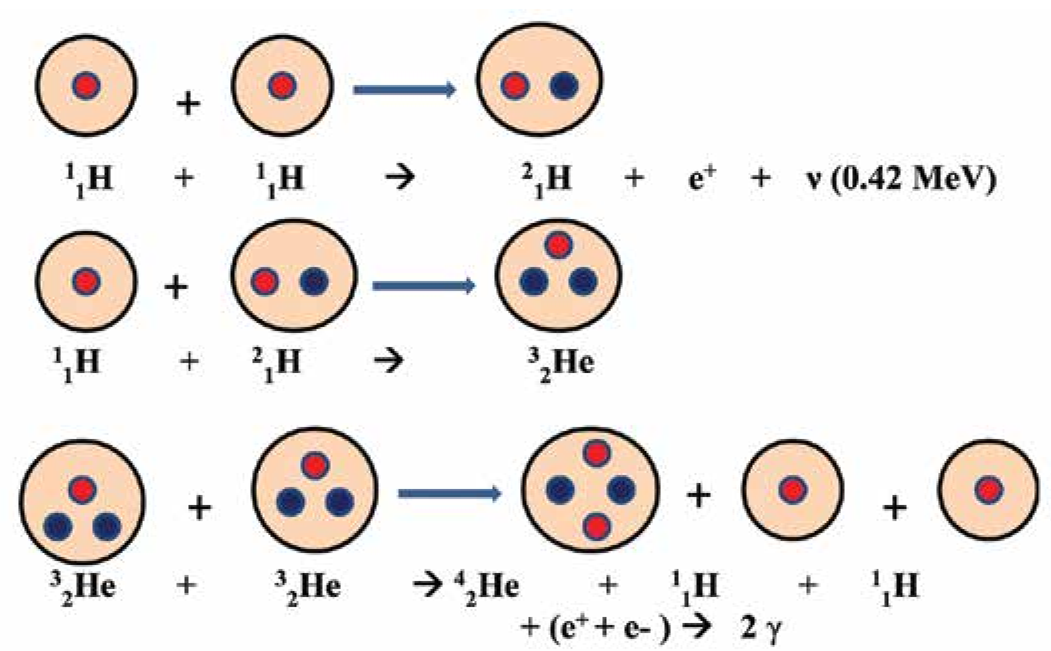
1929 में, जॉर्ज गैमो (1904 - 1968), रॉनल्ड गर्नी (1898 -1953), और ऐडवर्ड कॉन्डन (1902 - 1974) ने क्वाण्टम टनलिंग के तथ्य की खोज की थी। शिक्षा की विभिन्न शाखाओं के लिए, और ख़ासतौर पर खगोलभौतिकी के लिए, टनलिंग



चित्र-6 : क्वाण्टम टनलिंग
Credits: Dr. James Shombert, University of Oregon.

के इस तथ्य के महत्त्व के बारे में जितना कहा जाए कम ही होगा। बुनियादी रूप से, इस एक खोज ने ऐसा धक्का दिया जिससे नाभिकीय खगोलभौतिकी के पूरे विषय की उत्पत्ति हुई। टनलिंग की घटना इस ब्रह्माण्ड में जीवन के अस्तित्व के लिए ज़रूरी सबसे महत्त्वपूर्ण कारकों में से एक है। इससे तारे में ऊर्जा बनती है और उसके निकलने के लिए पर्याप्त लम्बा समय मिल जाता है। दिलचस्प बात यह है कि इस खोज के पहले कई सालों तक, कॉन्डन, जिन्होंने अन्ततः इस बात को समझाया था कि तारों के भीतर नाभिकीय अभिक्रियाएँ किस प्रकार हो सकती हैं, यह मानते थे कि द्रव्यमान का नाश ही तारे की ऊर्जा का स्रोत था, और यही उनके लम्बे जीवन का कारण था। लेकिन, इस बात को समझाने का कोई कारण नहीं पाया गया कि द्रव्यमान के विनाश से सूर्य के भीतर जिस दर से ऊर्जा पैदा होती है, वह क्यों होती है। टनलिंग से, पैदा होने वाली ऊर्जा की मात्रा, और कितनी जल्दी यह पैदा होती है, इन दोनों बातों का बहुत बेहतर स्पष्टीकरण मिल जाता है। इसके अलावा टनलिंग प्रभाव ही सर्वदा उपयोग में आने वाले ठोस अवस्था वाले डायोड और ट्रांजिस्टर, जैसे यंत्रों की क्रियाविधि का आधार हैं जो पूरी तरह से, इलेक्ट्रॉनिक्स के उद्योग की रीढ़ की हड्डी हैं।

ग़ैर-अपघटनीय पदार्थों के रूप में तत्वों की पिछली परिभाषा को भी असमर्थनीय बना दिया क्योंकि किसी तत्व को उसके समस्थानिकों में अपघटित किया जा सकता है जिनके गुण मूल तत्व से थोड़े-से भिन्न होते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि किसी तत्व के परमाणु विभिन्न रूपों में हो सकते हैं, और इससे डाल्टन की परिभाषा खण्डित हो जाती है। इसके अलावा, उसके समस्थानिकों को पुनः मिलाने से हमें मूल पदार्थ फिर से प्राप्त हो जाता है, और इस तरह, पिछली परिभाषा के अनुसार कोई भी ऐसा तत्व जिसके एक से ज़्यादा समस्थानिक हों वह सच्चा तत्व नहीं हो सकता। इसका एक आकर्षक उदाहरण भारी जल के अस्तित्व में देखा जाता है। सादे पानी में हाइड्रोजन का सामान्य रूप होता है, और उसके नाभिक में एक प्रोटॉन होता है। जबकि भारी जल में ड्यूटेरियम होता है जो हाइड्रोजन का एक समस्थानिक है जिसके भीतर एक अतिरिक्त न्यूट्रॉन होता है। इस वज़ह से भारी जल के अणु अपेक्षाकृत काफ़ी अधिक भारी हो जाते हैं (भारी जल का एक मोल या ग्राम अणु, सादे पानी के एक मोल से लगभग 2 ग्राम ज़्यादा भारी



चित्र 7: प्रोटॉन-प्रोटॉन शृंखला (या पीपी शृंखला) अभिक्रिया।
Credits: Nagendra Nath Mondal, Wikimedia Commons. URL: https://en.wikipedia.org/wiki/File:H-2_atom.png. License: CC-BY.

हो सकता है) - इसका जमाव बिन्दु लगभग 4 डिग्री सेंटीग्रेड है, और यह लगभग 11 प्रतिशत ज़्यादा सघन होता है। भारी जल के नाभिकीय और जैविक गुण भी अलग होते हैं, और इसे परमाणु संयत्र (न्यूक्लियर रिएक्टर) में न्यूट्रॉन मन्दक (मॉडरेटर) के रूप में (यानी न्यूट्रॉनों को अवशोषित करने के लिए) काफ़ी व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है। क्या यह अद्भुत बात नहीं है कि किसी एक समस्थानिक की उपस्थिति मात्र से गुणों में इतना ज़्यादा अन्तर आ सकता है?

रसायनविज्ञान का आधुनिक युग सम्भवतया 1789 के आस-पास शुरू हुआ, जब ‘रसायनविज्ञान के जनक’ ऐण्टवॉन लॉरेण्ट डि लैवोजिये (1743 - 1794) ने तत्वों को वर्गीकृत करने का प्रयास किया। लैवोजिये ने रासायनिक तत्व को ऐसे पदार्थ के रूप में परिभाषित किया जो **रासायनिक विश्लेषण** की किसी भी ज्ञात पद्धति द्वारा और विभाजित नहीं किया जा सकता। यह बहुत ही सटीक परिभाषा थी - अनूठी भी, क्योंकि पीछे देखने पर ऐसा लगता है कि इस परिभाषा को ऐसी वस्तुओं तक सीमित करके, जो ‘रासायनिक विश्लेषण द्वारा अविभाज्य’ थीं, लैवोजिये यह सुझा रहे थे कि अन्य पद्धतियाँ, जिनका पता लगभग 150 साल बाद चला, तत्व को विभाजित करने में या नया तत्व बनाने में सफल हो सकती थीं (**बॉक्स-1** देखें)।

आइए अब हम दूसरे सवाल को देखें ‘परमाणु क्या होते हैं और वे तत्वों से किस प्रकार सम्बन्धित हैं?’ उन्नीसवीं और बीसवीं सदियों की कई अद्भुत वैज्ञानिक खोजों ने, जिनमें नाभिकीय भौतिकी और खगोलभौतिकी आदि में हुई तरक्क़ियाँ भी शामिल हैं, स्पष्ट रूप से यह दिखाया है कि विभिन्न प्रकार के तत्व परमाणुओं से मिलकर बनते हैं। हम सब यह जानते हैं कि परमाणु बुनियादी रूप से तीन स्थाई कणों से मिलकर बनते हैं - धनात्मक रूप से आवेशित प्रोटॉन, शून्य शुद्ध आवेश वाले न्यूट्रॉन, ऋणात्मक रूप से आवेशित इलेक्ट्रॉन। किसी भी तत्व के परमाणु में निश्चित संख्या में प्रोटॉन और न्यूट्रॉन होते हैं जो मिलकर एक छोटा-सा नाभिक बनाते हैं, और इलेक्ट्रॉन इस ठोस केन्द्र के चारों ओर चक्कर लगाते हैं। इन तीनों कणों को ध्यान में रखते हुए, हम ‘तत्व’ की, उसके परमाणुओं के सन्दर्भ में, एक शुद्ध और सुस्पष्ट परिभाषा दे सकते हैं :

‘तत्व एक प्रकार के परमाणुओं से मिलकर बनता है, और इन सभी परमाणुओं में प्रोटॉनों की संख्या समान होती है (जिसे उस तत्व का परमाणु क्रमांक कहते हैं)।’

यह परिभाषा इस बात को स्पष्ट करती है कि एक अकेले मुक्त न्यूट्रॉन, या न्यूट्रिनो, पाइऑन, केऑन, फोटॉन आदि, जैसे अपरमाणविक कणों को तत्व नहीं माना जा सकता।

परमाणुओं के प्रेक्षण

आइए अब हम परमाणु सिद्धान्त गढ़ने के अर्थ पर विचार करें। क्या हमें इसकी ज़रूरत भी है? ऐसा करने से क्या लाभ हैं? लेकिन, पहले, हम कुछ आसान प्रश्नों पर विचार कर लें। क्या परमाणु वास्तव में होते हैं? यदि हाँ, तो क्या उन्हें देखा जा सकता है (**बॉक्स-2** देखें)?

अब जबकि स्थिति स्पष्ट है, और हम परमाणुओं के अस्तित्व की हक़ीक़त के बारे में निश्चिन्त हैं, भले ही उन्हें सीधे-सीधे न देखा जा सकता हो, हम अपने अगले विचार की तरफ़ बढ़ते हैं कि, बिग बैंग के दौरान बने आदि तत्व हाइड्रोजन से सभी तत्वों के सृजन के बारे में लोग क्या कल्पना करते हैं।

गैसीय हाइड्रोजन के बादल के भीतर का गतिविज्ञान

अपनी सृष्टि के बाद जब ब्रह्माण्ड ठण्डा हुआ, तो हाइड्रोजन के परमाणु संघनित होकर विराट बादलों में तब्दील हो गए, जो मुख्यतः गुरुत्वाकर्षण के कारण एक-दूसरे से जुड़े रहे (ये बादल संघनित कैसे हुए, इसके बारे में विस्तार से जानने के लिए इसी अंक का लेख ‘ग्रहों के संसारों की उत्पत्ति’ देखें)। ध्यान में रखें, कि यद्यपि किसी गैस के बादल में ऐसी कोई दीवारें नहीं होतीं कि

बॉक्स-6 : ड्यूटेरियम (^{2}He) के बनने का एक संक्षिप्त घटनाक्रम

1930 के दशक के इर्द-गिर्द, नाभिकीय भौतिकी का विषय, महत्त्वपूर्ण परिणामों के साथ सामने आ रहा था, और बहुत-से महत्त्वपूर्ण समस्थानिकों और तत्वों की खोज हो रही थी। दो वैज्ञानिकों - रॉबर्ट डैस्कोर्ट ऐटकिंसन और चार्ल्स क्रिचफील्ड - ने प्रोटॉन-प्रोटॉन शृंखला अभिक्रिया की हमारी समझ को विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाईं।

1919 : खगोल भौतिकविज्ञानी ऐडिंग्टन ने सुझाया कि हाइड्रोजन से हीलियम में **संश्लेषण**, सूर्य के भीतर ऊर्जा का स्रोत हो सकता है, पर उन्हें इस बारे में कोई अनुमान नहीं था कि यह प्रक्रिया किस प्रकार होती होगी। लोगों का सोचना था कि हीलियम के नाभिक में 4 प्रोटॉन और 2 इलेक्ट्रॉन थे, और इस तरह उसमें दो का शुद्ध धनात्मक आवेश था (याद करें कि न्यूट्रॉन की खोज तो 1932 में जाकर हुई थी)। इसके अलावा, 2 या 3 परमाणु द्रव्यमान वाले कोई भी नाभिकों के अस्तित्व के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। इसलिए, ऐडिंग्टन की परिकल्पना का संश्लेषण तभी हो सकता था जब 4 प्रोटॉन और 2 इलेक्ट्रॉन, एक साथ मिलकर ऊर्जा निकालें, और फिर हीलियम के नाभिक के रूप में इकट्ठे बने रहें। इसे एक बेहद पेचीदा और अत्यन्त दुर्लभ प्रक्रिया माना जाता था।

1931 : ऐटकिंसन का कहना था कि “स्थिति यह थी कि प्रेक्षणों के द्वारा बहुत आँकड़े इकट्ठा हो गए थे, और **प्रतिवाद को सामने रखे बगैर मनमानी परिकल्पना गढ़ना** अब सम्भव नहीं रह गया था।” इस समय कई नाभिकीय प्रयोग किए जा रहे थे, और इस बात का भी

पता लगाया गया कि हाइड्रोजन **पहला और सम्भवतया अकेला** रासायनिक तत्व था जो ब्रह्माण्ड के प्रारम्भ में भी मौजूद था। मुश्किल तो इस बात का पता लगाने में थी कि सिर्फ़ और सिर्फ़ शुद्ध हाइड्रोजन के साथ संलयन कैसे शुरू हो सकता था। शोधकर्ताओं ने जितने भी परिदृश्य सामने रखे, उन सब में यह माना गया कि, **हाइड्रोजन से भारी तत्वों का पहले अस्तित्व था।** लेकिन उनमें से किसी में स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था कि ये भारी तत्व किस तरह निर्मित हुए होंगे।

1936 : ऐटकिंसन ने कुछ ही पहले हुई न्यूट्रॉन, ड्यूटेरियम (^{2}H), और पॉजिट्रॉन की खोजों के मद्देनज़र 1931 में अपने द्वारा सामने रखे गए परिदृश्यों की पुनः पड़ताल की। यह माना गया था कि न्यूट्रॉनों के साथ होने वाली नाभिकीय अभिक्रियाओं को प्रोटॉनों के साथ प्रतिकर्षण की समस्या का सामना नहीं करना पड़ता है (न्यूट्रॉनों में शुद्ध आवेश शून्य होता है) और इसलिए वे किसी भी तापमान पर हो सकती हैं। सवाल यह था कि क्या तारों में पर्याप्त मात्राओं में न्यूट्रॉन पैदा किए जा सकते थे। प्रयोगशाला की दशाओं में देखी गई न्यूट्रॉन का उत्पादन करने वाली सभी सम्भव अभिक्रियाओं की पड़ताल करने से यह पता चला कि ऐसी अभिक्रियाएँ बहुत धीमी थीं और उनसे बहुत मामूली मात्राओं में न्यूट्रॉनों का उत्पादन हो रहा था। उदाहरण के लिए, $^1H + e \rightarrow n$ की अभिक्रिया, यानी, प्रोटॉन द्वारा इलेक्ट्रॉन का अवशोषण जिससे न्यूट्रॉन पैदा होता है, एक भी बार देखी ही नहीं गई। जो एकमात्र विकल्प बचा था, और जिसे ऐटकिंसन ने सुझाया था, वह था $^1H + {}^1H \rightarrow 2{}^2H + e^+$ की अभिक्रिया के माध्यम से पहले बहुत सारे ड्यूटेरियम (^{2}H) का उत्पादन करके उससे न्यूट्रॉन पैदा करना, और





चित्र-8 : रॉबर्ट डैस्कोर्ट ऐटकिंसन और चार्ल्स क्रिचफील्ड ने प्रोटॉन-प्रोटॉन शृंखला अभिक्रिया की हमारी समझ को विकसित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाईं।

फिर ड्यूटेरियम का विभाजन कर देना। इस ढंग से, ऐटकिंसन ने पीपी शृंखला की पहली अभिक्रिया की खोज की। लेकिन, ऐटकिंसन की अपेक्षा थी कि यह अभिक्रिया ड्यूटेरियम पैदा करेगी, और फिर उससे न्यूट्रॉन पैदा होंगे। उन्होंने यह अपेक्षा भी की थी कि प्रयोगशाला में इस अभिक्रिया को देखना और इसकी दर को मापना आसान रहेगा। यहाँ, वे ग़लत थे क्योंकि **यह तारों में होने वाली सबसे प्रसिद्ध नाभिकीय अभिक्रिया है** - ऐसी अभिक्रिया जिसे प्रयोगशाला में नहीं मापा जा सकता क्योंकि उससे होने वाला उत्पादन अत्यन्त कम है, यानी लगभग न के बराबर। इसके अलावा, ड्यूटेरियम के बनने की कठिन प्रक्रिया के होने के बाद ही, दूसरी अधिक तेज़ नाभिकीय संलयन अभिक्रियाओं की राह खुलती है।

1938 : चार्ल्स क्रिचफील्ड (1911 - 1994) जॉर्ज वॉशिंगटन विश्वविद्यालय में पीएचडी के छात्र थे, और वैज्ञानिकों, टैलर व गैमो के मार्गदर्शन में काम कर रहे थे। गैमो द्वारा सुझाया गया, उनकी थीसिस का विषय था, इस बात की गणना करना कि तारों में सबसे पहली पीपी अभिक्रिया कितनी जल्दी होती है। जब क्रिचफील्ड ने अपनी यह गणना पूरी कर ली, तो गैमो ने सुझाया कि उन्हें अपनी यह गणना नाभिकीय भौतिकी के श्रेष्ठ विशेषज्ञ, वैज्ञानिक हैंस बैथ को दिखाना चाहिए, और उनका अनुमोदन हासिल करना चाहिए। बैथ ने इस गणना को सही पाया, और इसलिए 1938 में बैथ और क्रिचफील्ड ने इस गणना को प्रकाशित किया। इन लेखकों ने ऐटकिंसन को कोई श्रेय नहीं दिया, जबकि वे ऐटकिंसन ही थे जिन्होंने सबसे पहले पीपी अभिक्रिया का विचार सामने रखा था।

तो इस तरह पीपी शृंखला की पहली अभिक्रिया को खोजा गया। इसकी अधिकांश पड़ताल तो प्रयोगशालाओं में ही की गई थी, और इसकी शुद्धता को सुनिश्चित करने के लिए सूर्य के द्वारा पैदा की जाने वाली ऊर्जा के प्रेक्षणों से इसकी जाँच की गई थी।

गैस के अणु उनसे जाकर टकराते रहें, लेकिन ऐसे बादल में दाब, आयतन और तापमान अवश्य होते हैं - और बादल के संपीड़न के दौरान इन सभी में बदलाव होता है (**बॉक्स-3** देखें)। इसलिए भले ही किसी बादल के भीतर ये मात्राएँ हर जगह एक समान रही हों या न रही हों, एक अधिक संघनित बादल में निश्चित रूप से ज़्यादा आन्तरिक दाब और तापमान था।

जब हाइड्रोजन के किसी बादल में इतना आन्तरिक गुरुत्वाकर्षण होता है कि वह सिकुड़ना शुरू कर दे तो फिर कई अद्भुत घटनाएँ घटती हैं (**बॉक्स-4** देखें)। ध्यान रखें कि हम गैस के ऐसे बादल के बारे में बात कर रहे हैं जिसका द्रव्यमान अत्यधिक है। यह बादल इतना विशाल है कि यह संघनित होकर नाभिकीय अभिक्रियाएँ शुरू कर सकता है और किसी तारे को जन्म

दे सकता है। इनमें से कुछ बादल काफ़ी छोटे होते हैं, और वे एक स्थिति में जाकर संघनित होना बन्द कर देते हैं क्योंकि उनके पास पर्याप्त गुरुत्वाकर्षी स्थितिज ऊर्जा नहीं होती हैं, पर हम इन बादलों की चर्चा यहाँ नहीं करेंगे।

जब एक सिकुड़ते हुए गैस के बादल के केन्द्र का तापमान कुछ करोड़ डिग्री सेंटीग्रेड पर पहुँच जाता है, तो उसमें मौजूद परमाणुओं का अस्तित्व समाप्त हो जाता है, और वे अलग-अलग गति कर रहे इलेक्ट्रॉनों और प्रोटॉनों का बस एक सघन सूप बन जाते हैं। जब इस अवस्था में दो प्रोटॉन एक-दूसरे से भिड़ते हैं तो वे अपने प्रबल स्थिरवैद्युत प्रतिकर्षण (दोनों ही धनात्मक रूप से आवेशित हैं) से पार पा लेते हैं और एक-दूसरे के इतने क़रीब आ जाते हैं कि आकर्षण के नाभिकीय बल लगाने लगते हैं। ऐसा क्वाण्टम टनलिंग नामक तथ्य के कारण होता है। क्वाण्टम टनलिंग में दो प्रोटॉन इतना पास आ जाते हैं कि वे अपेक्षाकृत कम तापमानों पर भी एक-दूसरे से बँध जाते हैं। 1920 के दशक में ही इस बात का पता चल गया था कि किसी तारे के केन्द्र का तापमान, जो कि कुछ करोड़ डिग्री सेंटीग्रेड होता है, उस तापमान से लगभग **1000 गुना कम** होता है, जो दो प्रोटॉनों को इतना क़रीब ले आए कि वे आपस में बँध जाएँ। दिलचस्प बात यह है कि इस तथ्य का पता हमें न्यूट्रॉन की खोज (जो 1932 में हुई थी) के भी पहले चल गया था। उस समय, यह सम्भावना कि अधिक परमाणु भार वाले तत्व संलयन (फ्यूजन) के द्वारा बनते थे, विशुद्ध अटकल थी, और इस बात का कोई भी विश्वसनीय प्रमाण नहीं था कि ऐसा कैसे होता है।

जब प्रोटॉन एक-दूसरे के इतने क़रीब आ जाते हैं कि वे एक-दूसरे के भीतर **क्वाण्टम यांत्रिकीय सुरंग** द्वारा घुस जाएँ, तो नाभिकीय बल, यानी सशक्त और कमज़ोर बल भी हरकत में आ जाते हैं और पूरी तस्वीर एकदम से बदल जाती है। प्रोटॉन अब न्यूट्रॉनों में बदल सकते हैं, अन्य प्रोटॉन साथ में जुड़कर ज़्यादा बड़े नाभिक बना सकते हैं आदि-आदि। इन नाभिकीय अभिक्रियाओं से निकलने वाली ऊर्जा, अभी तक निकल रही ऊष्मा विकिरण ऊर्जा से इतनी अधिक होती है कि उसे मापा नहीं जा सकता। जैसा कि हम जानते हैं, इस समय एक तारा जन्म लेता है, और नाभिकीय संलयन द्वारा ऊर्जा पैदा करता है। इससे उसका सिकुड़ना धीमा पड़ जाता है, और वह तारा ऊष्मा पैदा करने लगता है जिसका उसकी सतह से विकिरण होता है। ऊर्जा और विकिरण के उत्पादन की ये दो प्रक्रियाएँ इस बात को सुनिश्चित करती हैं कि वह तारा लम्बे समय तक एक निश्चित आकार का बना रहता है।

तारों के भीतर का तापमान इतना कम होता है कि नाभिकीय अभिक्रियाएँ इतनी धीमी गति से चलती रहती हैं जिससे लम्बे समय तक ऊर्जा निकलती रहती है, जो ग्रहों के, और ख़ुद जीवन के, विकास के लिए ज़रूरी है। अगर तारों के केन्द्र में तापमान अधिक रहा होता, तो ये अभिक्रियाएँ ज़्यादा तेज़ी-से हुई होतीं, इससे निकलने वाली ऊर्जा भी अधिक होती, और इन तारों के जीवनकाल अपेक्षाकृत छोटे होते।

भारी तत्वों का सृजन

इससे पहले कि हम ज़्यादा भारी तत्वों के सृजन की बारीकियों में जाएँ, आइए हम तत्वों के नाभिकों के संकेतन को थोड़ा-सा देख लें क्योंकि इसके बाद उनका उपयोग किया जाएगा।

हम संकेत चिन्ह, $^{Z}_{A}S$ का प्रयोग परमाणु S को, एक परमाणु क्रमांक (या नाभिक के भीतर प्रोटॉनों की संख्या) A, और द्रव्यमान संख्या (प्रोटॉनों की संख्या और न्यूट्रॉनों की संख्या का योग) Z के साथ दर्शाने के लिए करते हैं। हम सामान्यतया परमाणु क्रमांक को हटा देंगे क्योंकि यह काफ़ी भारी-भरकम हो सकता है, और जब सहूलियत होगी तो सिर्फ़ ^{Z}S ही लिखेंगे। यदि आपके पास आवर्त सारणी हो, और आपको किसी परमाणु का संकेत पता हो, तो आप उसके परमाणु क्रमांक का हमेशा पता लगा सकते हैं। उदाहरण के लिए, ^{8}Be बेरिलियम परमाणु का नाभिक होगा जिसका परमाणु **द्रव्यमान** 8 (इसका परमाणु क्रमांक 4 है) है।

अब हम वापस तारों के भीतर होने वाली घटनाओं पर चलते हैं। ऐसी दो बुनियादी नाभिकीय अभिक्रियाएँ होती हैं जो हाइड्रोजन से हीलियम पैदा करती हैं। पहली, जिसे प्रोटॉन-प्रोटॉन (पीपी) शृंखला अभिक्रिया कहते हैं, किसी सामान्य तारे में पैदा होने वाली ऊर्जा का 94% पैदा करती है। (**चित्र-7** देखें।)

इन अभिक्रियाओं में, ^{1}**H** हाइड्रोजन नाभिक का प्रतीक होता है जो एक अकेला प्रोटॉन है, ^{2}**H** ड्यूटेरियम नाभिक का प्रतीक होता है, जो एक प्रोटॉन और एक न्यूट्रॉन से बनता है जो एक-दूसरे से बँधे रहते हैं, e^{+} पॉजिट्रॉन (जिसे 1932 में प्रायोगिक रूप से खोजा गया था) या किसी इलेक्ट्रॉन का प्रति-कण है, ν_e इलेक्ट्रॉन न्यूट्रिनो है (जिसके अस्तित्व का पूर्वानुमान 1930 में लगा लिया गया, लेकिन प्रायोगिक रूप से 1956 में जाकर खोजा गया)। ^{3}**He** हीलियम नाभिक का एक समस्थानिक है जिसमें दो प्रोटॉन और एक न्यूट्रॉन होता है, ^{4}**He** मानक हीलियम नाभिक है जिसमें दो प्रोटॉन और दो न्यूट्रॉन होते हैं, और γ इन अभिक्रियाओं से निकलने वाली चमकदार ऊर्जा होती है।

पहले तो, ध्यान दें कि पीपी शृंखला दरअसल एक **चक्र** होती है - ऐसा चक्र दो प्रोटॉनों के आपस में अभिक्रिया करने से शुरू होता है, और एक हीलियम नाभिक तथा दो और प्रोटॉनों के साथ समाप्त होता है। इस शृंखला की सबसे पहली अभिक्रिया, जो दो प्रोटॉनों को अभिक्रिया करता हुआ दिखाती है जिससे ड्यूरेरियम का नाभिक बनता है (जिसमें एक पॉजिट्रॉन और न्यूट्रिनो होते हैं), इस पूरी शृंखला की **निर्णायक कारक** होती

है। इसके घटने में लगने वाला समय लगभग सौ करोड़ साल का होता है। इसका मतलब यह हुआ कि सूर्य के केन्द्र में पाई जाने वाली दाब और तापमान की दशाओं तले भी प्रोटॉनों के किसी अमुक जोड़े के लिए आपस में जुड़कर एक ड्यूटेरियम बनाने में **सौ करोड़ साल से भी ज़्यादा** लग सकते हैं। प्रोटॉनों के बीच होने वाली अधिकांश टक्करों में, वे इकट्ठे हो जाते हैं और बाद में फिर विभाजित हो जाते हैं। संलयन के घटने के आसार बहुत कम होते हैं, क्योंकि इस अभिक्रिया में **कमज़ोर नाभिकीय बल** निर्णायक होते हैं। इस शृंखला में होने वाली अन्य अभिक्रियाएँ अपेक्षाकृत तेज़ी-से होती है क्योंकि वे **सशक्त नाभिकीय बल** द्वारा नियंत्रित होती हैं, जो कि कमज़ोर बल से कहीं ज़्यादा शक्तिशाली होता है।

सूर्य में हीलियम, और लिहाज़ा ऊर्जा, पैदा करने के लिए जो दूसरी महत्त्वपूर्ण अभिक्रिया होती है वह CNO चक्र की अभिक्रिया होती है। जैसा कि नाम से पता चलता है, इस अभिक्रिया में कार्बन, नाइट्रोजन और ऑक्सीजन के तत्व शामिल रहते हैं, पर यहाँ पर हम इसका वर्णन नहीं करेंगे।

आइए अब हम उन अभिक्रियाओं की बात करें जिनमें हीलियम जलकर अन्य भारी तत्व बनाती है। ये अभिक्रियाएँ सूर्य में या उसी आकार के दूसरे तारों में काफ़ी हद तक नहीं होतीं, जिनमें अभी भी मुख्य रूप से हाइड्रोजन जलती रहती है।

किसी गैस के बादल के गतिविज्ञान को पुनः याद करें। हम जानते हैं कि एक बार हाइड्रोजन, हीलियम में बदल जाए, और पैदा हुई अतिरिक्त ऊष्मा का विकिरण हो जाए, तो तारा कुछ ठण्डा हो जाता है, और धीरे-धीरे फिर से सिकुड़ने लगता है। यह संकुचन तारे के केन्द्र के तापमान को लगभग 10 करोड़ डिग्री सेंटीग्रेड तक बढ़ा देता है। इतने तापमानों पर हीलियम के नाभिक संलयन करके भारी तत्व बना देते हैं। हीलियम के इस जलने की पहली अभिक्रिया है :

$^{4}He + {}^{4}He \rightarrow {}^{8}Be$

यह अभिक्रिया **ऊष्माशोषी** अभिक्रिया है, यानी, इसे होने के लिए ऊर्जा की ज़रूरत होती है। लेकिन, हीलियम के जलने में जो अगला महत्त्वपूर्ण चरण है, जिसमें ^{8}Be का ^{12}C में रूपान्तरण शामिल होता है, वह **ऊष्माक्षेपी** अभिक्रिया है

$^{8}Be + {}^{4}He \rightarrow {}^{12}C + \gamma$

इन दो अभिक्रियाओं के संयोजन के परिणामस्वरूप हीलियम के तीन नाभिकों से एक कार्बन नाभिक बनता है। शुद्ध अभिक्रिया ऊर्जा छोड़ती है, क्योंकि पहली अभिक्रिया में जितनी ऊर्जा लगी थी, उससे ज़्यादा ऊर्जा दूसरी अभिक्रिया छोड़ती है। लेकिन, यह अभिक्रिया अत्यन्त तापमान संवेदी होती है, जिसका मतलब यह हुआ कि किसी नाभिकीय अभिक्रिया में एक ईंधन के रूप में, हाइड्रोजन की तुलना में **हीलियम कहीं अधिक विस्फोटक होती है**। एक बार ^{12}C बन जाए, तो आगे ऑक्सीजन और निऑन के नाभिक बनाने वाली अभिक्रियाएँ होना शुरू हो जाती हैं :

$^{12}C + {}^{4}He \rightarrow {}^{16}O + \gamma$

~~12~~$^{16}O + {}^{4}He \rightarrow {}^{20}Ne + \gamma$

ये प्रक्रियाएँ - जो हीलियम के दहन से मिलती-जुलती हैं - आगे जाकर कार्बन, निऑन, ऑक्सीजन, सिलिकॉन, जैसे ज़्यादा भारी तत्वों के दहन की राह खोलती हैं। ऐसी अभिक्रियाओं के होने की सम्भावना **सौ करोड़ डिग्री** या इससे ज़्यादा तापमान होने पर ही बढ़ती है। इनमें से अधिकांश अभिक्रियाएँ काफ़ी पेचीदा होती हैं और ये कई **मार्गों (चैनलों)** से होकर आगे बढ़ सकती हैं, यानी, संयोग के आधार पर एक से अधिक प्रकार के उत्पाद दे सकती हैं (**बॉक्स 5** की याद करें)। उदाहरण के तौर पर, दो कार्बन परमाणुओं की इस अभिक्रिया पर गौर करें जो या तो मैग्नीशियम पैदा कर सकती है या फिर सोडियम, या निऑन और या ऑक्सीजन :

$^{12}C + {}^{12}C \rightarrow {}^{24}Mg + \gamma$

$\rightarrow {}^{23}Mg + n$

$\rightarrow {}^{23}Na + p$

$\rightarrow {}^{20}Ne + {}^{4}He$

$\rightarrow {}^{16}O + 2\,{}^{4}He$

इनमें से हर एक चैनल के लिए सापेक्ष सम्भावनाएँ बहुत भिन्न-भिन्न होती हैं, और ये तारे के केन्द्र के तापमान पर निर्भर करती हैं। इसी प्रकार ऑक्सीजन के नाभिकों के साथ विभिन्न अभिक्रियाएँ हो सकती हैं और वे ^{28}Si, ^{31}S, और ^{31}P के साथ समाप्त होती हैं।

इन अत्यधिक तापमानों पर होने वाला कुछ विकिरण दरअसल नए बने नाभिकों को छोटे नाभिकों में तोड़ देता है, और इस प्रक्रिया को उपयुक्त नाम दिया गया है - **प्रकाश विघटन (फोटो डिसइंटेग्रेशन)**। ऐसी अभिक्रियाओं के होने से इतने ऊँचे तापमानों पर स्थितियाँ जटिल हो जाती हैं। उदाहरण के लिए, यह अभिक्रिया :

$^{20}Ne + \gamma \rightarrow {}^{16}O + {}^{4}He$, निऑन के फोटो डिसइंटेग्रेशन द्वारा हीलियम पैदा कर सकती है। हीलियम का ऐसा नाभिक, फिर से अभिक्रियाओं के एक पूरे क्रम में शामिल होकर ^{16}O, ^{24}Mg, और ^{28}Si की राशि देता है।

जब किसी तारे के केन्द्र का तापमान तीन सौ करोड़ डिग्री से अधिक हो, तो नाभिकीय अभिक्रियाओं और फोटो डिसइंटेग्रेशन के कई जटिल सिलसिले घटित हो सकते हैं। ये प्रक्रियाएँ धीरे-धीरे अधिक भारी नाभिक बनाती जाती हैं जैसे, ^{27}Al और ^{24}Mg, तथा आगे जाकर ^{56}Fe तक। ^{56}Fe से कम द्रव्यमान वाले नाभिकों के निर्माण में ऊर्जा निकलती है, लेकिन ^{56}Fe से ज़्यादा

द्रव्यमान वाले नाभिकों के निर्माण में ऊर्जा की ज़रूरत पड़ती है।

पर ये भारी तत्व संश्लेषित कैसे होते हैं? ऐसी अभिक्रियाओं का एक समूह नाभिकों द्वारा न्यूट्रॉनों को हथियाने पर निर्भर करता है। यह ऐसी प्रक्रिया है जो धनात्मक रूप से आवेशित नाभिकों में होने वाले शक्तिशाली प्रतिकर्षण से प्रभावित नहीं होती। इसलिए Z परमाणु द्रव्यमान और A परमाणु क्रमांक वाला एक नाभिक, Z + 1 का नाभिक बन जाएगा जब वह एक न्यूट्रॉन को अवशोषित कर लेगा, और यह तब तक चल सकता है जब तक कि एक इलेक्ट्रॉन को उत्सर्जित करके परिणामी नाभिक नष्ट हो जाता है और परमाणु क्रमांक A + 1 वाला एक नया तत्व अस्तित्व लेता है। इसी प्रकार, लोहे से ऊपर के तत्व भी संश्लेषित होते हैं। ध्यान रखें कि प्रकृति में नहीं पाए जाने वाले तत्वों को भी प्रयोगशाला में इसी ढंग से बनाया जाता है, यानी, न्यूट्रॉनों के अवशोषण द्वारा।

निष्कर्ष

यहाँ पर हमने संक्षेप में इस बात को समझा कि तारों के भीतर तत्वों का जन्म कैसे होता है। जब तारों की उम्र बढ़ जाती है, और वे सुपरनोवा बन जाते हैं, और उनमें विस्फोट होता है, तो वे ब्रह्माण्ड में उन तत्वों को बो जाते हैं जिन्हें उन्होंने बनाया था। फिर ये तत्व अक्सर गैस के बादलों में पहुँच जाते हैं, जो संघनित होकर नए तारे और नए ग्रहों का निर्माण करते हैं जिन पर जीवन आकार लेता है।

इस कहानी का बहुत सारा हिस्सा नहीं खोजा जा सकता था अगर नाभिकीय भौतिकी का इतना विकास न हुआ होता कि कणों को एक-दूसरे की तरफ़ फेंककर अभिक्रियाओं को शुरू करना और देखना कि कौन-से नए नाभिक बनते हैं, वे अपने टकरावों के कारण किस तरह नष्ट होते हैं, और यह भी ध्यान देना कि इन अभिक्रियाओं के होने की सम्भावनाएँ क्या हैं। नए माध्यम, रेडियोधर्मिता को देखने के नए तरीक़े और नाभिकों की स्थिरता की समझ, इस बात को समझने में महत्त्वपूर्ण रहे हैं कि तारे किस तरह तत्वों को जन्म देते हैं। हालाँकि अभी भी ऐसे अनेक सवाल हैं जिनके जवाब मिलना बाक़ी हैं, और इसीलिए अभी भी यह अध्ययन का ऐसा फलता-फूलता क्षेत्र है जिसमें बहुत से आश्चर्य छिपे हैं।

References

1. The Synthesis of the Elements: The Astrophysical Quest for Nucleosynthesis and What It Can Tell Us About the Universe. Giora Shaviv. Springer-Verlag Berlin Heidelberg, 2012, ISBN 978-3-642-28384-0.
2. Theoretical Astrophysics Volume I: Astrophysical Processes. T. Padmanabhan. Cambridge University Press, 2000.
3. The Atom in the History of Human Thought. Bernard Pulman. Oxford University Press, 1998.

श्रीनिवासन कृष्णन, वर्तमान में सेंटर फॉर लर्निंग, बेंगलूरु में विज्ञान और भौतिकी पढ़ाते हैं। उन्होंने आईयूसीएए से अर्ध शास्त्रीय क्वाण्टम गुरुत्वाकर्षण के क्षेत्र में पीएचडी की है। उनकी अन्य रुचियों में अभिकल्पना और प्रौद्योगिकी, इलेक्ट्रॉनिक्स और पढ़ना शामिल है। उनसे ksrini9@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** भरत त्रिपाठी